॥ श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गौ जयतः ॥

श्री श्री भागवत-पत्रिका

राष्ट्रभाषा हिन्दीमें श्रीश्रीरूप-रघुनाथकी वाणीकी अनुपम वाहिका

वर्ष—१७ संख्या—१-३ प्रबन्ध क्रमांक-८

नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री
श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजको समर्पित
एवं
नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री
श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजके
आदेश-निर्देश और प्रेरणानुसार

श्रील भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजके हरिकथामृत-सिन्धुका एक बिन्दु—

हमारा एक परम-बान्धव अवश्य होना चाहिए

[११ मार्च, १९९३को श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, मथुरामें श्रीउपदेशामृतके चतुर्थ श्लोकपर प्रदत्त हरिकथासे उद्धृत—]

ददाति प्रतिगृह्णाति गुह्यमाख्याति पृच्छति च।
भुंक्ते भोजयते चैव षड्विधा प्रीतिलक्षणम्॥

(श्रीउपदेशामृत-४)

[विशुद्ध भक्तोंको उनकी आवश्यकतानुसार वस्तु देना, विशुद्ध भक्तोंके द्वारा दी हुई प्रसादरूप वस्तु ग्रहण करना, भजन-सम्बन्धी अपनी गुप्त बातें भक्तोंके निकट कहना, भजन-सम्बन्धी रहस्यमयी गुप्त बातोंको उनसे पूछना, भक्तोंके द्वारा दिए गए प्रसादको प्रीतिपूर्वक भोजन करना और उन्हें प्रीतिपूर्वक भोजन कराना—ये छः प्रकारके सत्सङ्गरूप प्रीतिके लक्षण हैं।]

हरिभक्तिसुधोदय (८/५१) में एक श्लोक है—

यस्य यत्सङ्गतिः पुंसो मणिवत् स्यात् स तद्गुणः।
स्वकुलद्धर्यै ततो धीमान् स्वयूथान्येव संश्रयेत्॥

[जिस प्रकार मणिके निकट स्थित वस्तुके गुण मणिमें प्रतिबिम्बित होते हैं, उसी प्रकार व्यक्ति जिसका सङ्ग

करता है, उसके गुण उसमें सञ्चारित होते हैं। इसलिए विवेकी पुरुषको अपनेसे श्रेष्ठ, स्नेहशील एवं सजातीय साधुओंका ही आश्रय(सङ्ग) ग्रहण करना चाहिए।]

जिस प्रकार अनजानेमें या जानबूझकर यदि कोई व्यक्ति कुसङ्गके प्रति आसक्त होकर कुसङ्ग करता है, तो कुसङ्गका फल अवश्य ही उस व्यक्तिमें परिस्फुट होगा। उसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति साधुके प्रति आसक्त होकर साधुसङ्ग करता है, तो साधुसङ्गकी जो महिमा है वह उस व्यक्तिमें अवश्य प्रवेश करेगी। इसीलिए हम साधुओंका या वैष्णवोंका ही सङ्ग करेंगे। कुसङ्गमें रुचि होनेपर हम कुसङ्ग ही करेंगे और घोर नरकमें जाएँगे, किन्तु साधुओंका सङ्ग करनेसे भगवद् भक्ति प्राप्त करके हम धीरे-धीरे आगे बढ़ेंगे। इसीलिए यदि प्रीति करनी है, तो साधुओंके साथ उक्त श्लोकानुसार करनी होगी।

'ददाति', जो हमारी प्रिय वस्तु है और वैष्णवोंके भजनके अनुकूल है, किन्तु उनके पास नहीं है तो वह वस्तु उनको दो। जो भी वस्तु वैष्णवोंके भजनके अनुकूल है, वह उनको देनी चाहिए।

'प्रतिगृह्णाति'—जो साधु-वैष्णव हमारे प्रति स्नेहशील हैं, वे अनुग्रह करके हमको जो वस्तु देते हैं, हम उसे ग्रहण करेंगे।

श्रीनारद ऋषि कहते हैं—"बचपनमें मैं उन ऋषियोंके पास जाता था, जो हमारे गाँवमें चातुर्मास्य-व्रत करनेके लिए आये हुए थे। जब वे नदीमें स्नान करनेके लिए जाते तो मैं उनके सूखे कपड़ोंको लेकर उनके साथ जाता और उनके गीले कपड़ोंको लेकर लौटता। उनके प्रसाद सेवाके समय मैं पत्तल साफ करके उनके सामने रख देता, उनके लोटेमें पानी दे देता। वे लोग प्रसाद पानेके बाद मुझे आदेश देते—'बेटा, यह कुछ प्रसाद हमने तुम्हारे लिए रख दिया है। कोई व्यञ्जन अच्छा होता, तो उसे अपने पत्तलमें ही रख देते थे और बड़े प्रेमके साथ आदेश देकर मुझे कहते कि तुम इसे ग्रहण कर लो।' इस प्रकार उन ऋषियोंके द्वारा प्रदत्त प्रसादका सेवन करनेमात्रसे ही मेरा कल्याण हो गया। मेरा चित्त निर्मल हो गया और मेरे हृदयमें भगवत् भक्तिका प्रवेश हुआ। यदि मैं उनका जूठन ग्रहण नहीं करता तो ऐसा सम्भव नहीं होता।"

इसलिए वैष्णवोंका जूठन, उनके मुखसे निकली कथा, उनका पदधौत जल, उनकी पदरज—ये सब वस्तुएँ हमारे भजनके लिए बहुत बड़ा बल हैं। इसमें किसीको भी कभी कोई संदेह नहीं होना चाहिए। हममें ऐसी घृणा न आये कि वैष्णवोंके चरणकी धूलि हम कैसे स्पर्श करें? बल्कि छिपकर झडू ठाकुरकी भाँति उनकी चरणधूलिकी सेवा करें। तत्पश्चात् 'प्रतिगृह्णाति'—जो वे देते हैं, उसे प्रसादके रूपमें स्वीकार करो।

'गुह्यमाख्याति'—अपने मनकी बात साधुओंके पास, गुरुके पास अपना बन्धु समझकर उनके चरणोंमें निवेदन करो। उनसे ही पूछना चाहिए, उनसे ही सुनना चाहिए। अन्ततः संसारमें एक ऐसा परम-बान्धव होना चाहिए, जिनके सामने हम अपना हृदय खोलकर रख सकें। हम उनकी चिकित्सा (परामर्श) ग्रहण कर सकें। वे जैसा कहते हैं, वैसा करें। कभी-कभी हम देखते हैं कि हमें एक भी बन्धु नहीं मिलता। ऊपरसे तो हम कहते हैं—'हे गुरुदेव आप मेरे हृदयके बन्धु हैं,' किन्तु भीतरमें ऐसी कितनी बातें छिपाते हैं, जिनको हम उनके सामने कह नहीं पाते। इसलिए हमारा सर्वनाश होता है। हे भाई! अन्ततः एक बन्धु अवश्य होना चाहिए। बहुत हों, तो कोई आपत्ति नहीं। इसलिए गुरु-वैष्णवोंमें कोई एक बन्धु बनाओ और अपने भीतरमें जितनी भी बुराइयाँ हैं वे सब उनको दिखला दो कि मेरे हृदयमें ये सब हैं। वे अनुग्रह करके उन सब बुराइयोंको हमारे हृदयसे हटा देंगे और वहाँपर भगवान्को बैठा देंगे। यदि हम उनसे कपटता करेंगे, तो यह मलद्वारमें एक फोड़ेके समान होगा।

किसी एक व्यक्तिको मलद्वारमें एक फोड़ा हो गया। इसलिए लज्जाके कारण उसने इस विषयमें माता, पिता, भाई आदि किसीको भी नहीं बताया। तब धीरे-धीरे वह फोड़ा भगंदर बन गया जिसके अन्दर अब उसका हाथ भी चला जाता। अब क्या किया जा सकता था? चिकित्सा नहीं हो सकी और वह साधारण लज्जाके कारण मारा गया। इसलिए हमें सद्बन्धु, सद्वैद्यकी आवश्यकता है, जिनपर हम सम्पूर्ण विश्वास कर सकें और अपना हृदय खोलकर उनको दिखला सकें। उनके निकट ही हरिकथा जिज्ञासा करें और उनसे ही सुनें।

'भुंक्ते भोजयते चैव'। भुंक्ते—उनके द्वारा प्रदत्त प्रसाद आदि स्वीकार करें। भोजयते चैव—उनकी प्रिय वस्तु उनको भोजन कराएँ। इसके द्वारा उनका भाव हमारे हृदयमें संक्रमित होगा और उसीसे प्रतिकूल दूर होकर हमारा समस्त मङ्गल होगा।

https://www.facebook.com/srisribhagavatpatrika

श्रीश्रीभागवत-पत्रिकाका संग्रह — पुराने अङ्कोंको डाउनलोड किजिए।

प्रस्तुति - श्रीश्रीभागवत-पत्रिका सेवक-मण्डली